रविवारीय

डिजिटल दौड़ में जियो आगे, लेकिन विकल्प कितने बाकी?

प्रो. आरके जैन 'अरिजीत'
शिक्षाविद्

सेबी की मंजूरी के साथ रिलायंस जियो प्लेटफॉर्म्स का करीब 37,700 करोड़ रुपये का आईपीओ भारतीय शेयर बाजार में नया कीर्तिमान बना सकता है. करीब 27 करोड़ नए शेयर जारी होंगे और कंपनी का मूल्यांकन 137 अरब डॉलर तक पहुँच सकता है. रिलायंस इंडस्ट्रीज की 66 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी बनी रहेगी. मेटा और गूगल जैसे वैश्विक तकनीकी दिग्गज निवेश बनाए रखेंगे. आईपीओ से करीब 27,500 करोड़ रुपये रिलायंस जियो इन्फोकॉम का कर्ज चुकाने में जाएंगे. बाजार के लिए यह बड़ी पूंजी जुटाने की खबर है, लेकिन भारत के लिए सवाल बड़ा है—जियो का शेयर किस भाव पर बिकेगा, यह नहीं, बल्कि भारत की डिजिटल दुनिया की चाबी किन हाथों में रहेगी.

2016 में जियो का आगमन महज नई टेलीकॉम कंपनी का प्रवेश नहीं था, उसने भारत में इंटरनेट की तस्वीर बदल दी. मुफ्त-सस्ते डेटा ने इंटरनेट को महानगरों से गाँव-कस्बों की जरूरत बना दिया. वीडियो कॉल, ऑनलाइन पढ़ाई, मनोरंजन बढ़े और छोटे कारोबार डिजिटल बाजार में आए. आज जियो के 53 करोड़ से अधिक ग्राहक हैं, जिनमें 50.6 करोड़ वायरलेस ग्राहक हैं (जुलाई 2026, ट्राई रिपोर्ट). वह दुनिया के बड़े मोबाइल ऑपरेटरों में है. फिक्स्ड ब्रॉडबैंड में हिस्सेदारी 40% से अधिक, कुल ब्रॉडबैंड में करीब 49% और 5त्न फिक्स्ड वायरलेस एक्सेस में 70% से ज्यादा है. राजस्व 1.47 लाख करोड़ और मुनाफा करीब 30 हजार करोड़ रुपये है. आंकड़े ताकत बताते हैं, लेकिन सवाल है-जियो की इस ऊँचाई के बाद दूसरों के लिए मैदान कितना बचा है?

जियो की सफलता का दूसरा पहलू यहीं दिखता है. सस्ते डेटा ने करोड़ों भारतीयों को इंटरनेट से जोड़ा, लेकिन इस कीमत-क्रांति ने छोटे खिलाड़ियों की जगह भी घटाई. जब दो बड़ी कंपनियाँ ब्रॉडबैंड कनेक्शनों का करीब 84 प्रतिशत नियंत्रित करती हों, तो प्रतिस्पर्धा सिर्फ सस्ता पैकेज नहीं रह जाती. असली प्रतिस्पर्धा तब है, जब नया खिलाड़ी बाजार में आ सके, उपभोक्ता के पास विकल्प हों और छोटा खिलाड़ी बड़े को चुनौती दे सके. जियो ने दूरसंचार का खेल बदला, जिससे कई पुराने खिलाड़ी हाशिये पर चले गए या बाहर हो गए. यह पूंजीवाद की स्वाभाविक प्रक्रिया हो सकती है, लेकिन लोकतंत्र में सवाल जरूरी है-कहीं बाजार की जीत धीरे-धीरे विकल्पों की हार तो नहीं बन रही?

आईपीओ की असली तस्वीर निवेशकों के व्यवहार में दिखती है. कोई मौजूदा निवेशक हिस्सेदारी बेच नहीं रहा; रिलायंस, मेटा और गूगल निवेश बनाए रख रहे हैं. यानी यह निकासी नहीं, विस्तार का आईपीओ है. कर्ज चुकाने के बाद कंपनी के पास विस्तार का मजबूत आधार होगा. विस्तार मोबाइल सिम तक सीमित नहीं; जियो एआई, क्लाउड और डिजिटल प्लेटफॉर्म की ओर बढ़ रही है. यहीं दूरसंचार डेटा की दुनिया में बदलता है. करोड़ों ग्राहकों का नेटवर्क उनकी पसंद, जरूरत और डिजिटल व्यवहार के संकेत जुटाता है. आज डेटा कारोबार की पूंजी, कल एआई की ताकत बन सकता है. इसलिए जियो की असली पूंजी टावर, स्पेक्ट्रम, ग्राहक और उनसे पैदा होने वाला डेटा है.

डिजिटल दौर में एकाधिकार की शक्ल बदल चुकी है. भारत में चर्चा अब तक स्पेक्ट्रम, लाइसेंस और टैरिफ तक रही, लेकिन नई सत्ता अदृश्य है. किसी कंपनी को हर घर पर कब्जा करने की जरूरत नहीं; डिजिटल निर्भरता का सबसे बड़ा दरवाजा बनना ही काफी है. सवाल इंटरनेट की कीमत का नहीं, बल्कि सूचना किस नेटवर्क से गुजरती है, विज्ञापन की दिशा कौन मोड़ता है और छोटी डिजिटल कंपनियाँ ग्राहकों तक किस तंत्र से पहुँचती हैं. स्थानीय समाचार मंच, ऐप कंपनियाँ और क्षेत्रीय डिजिटल सेवाएँ ऐसे डिजिटल जंगल में जगह तलाशती हैं, जिसकी सबसे ऊँची छत पहले ही किसी और के कब्जे में है. यह न सरकारी नियंत्रण है, न पुराना निजी एकाधिकार—यह नेटवर्क, पूंजी और डेटा से उभरती नई सत्ता है.

जियो को इस पूरी कहानी का खलनायक मानना जितना आसान है, उतना ही अधूरा. भारत को डिजिटल बनाने में उसका योगदान ऐतिहासिक रहा है. सस्ता डेटा न आता तो करोड़ों भारतीय इतनी तेजी से इंटरनेट की मुख्यधारा में नहीं पहुँचते. लेकिन इतिहास चेताता है—समाज को जोड़ने वाली शक्ति जब एक जगह सिमटती है, तो विकल्प सिकुड़ते हैं. रेलवे ने भारत को जोड़ा, पर अगर हर पटरी, स्टेशन और टिकट एक ही हाथ में होता तो? डिजिटल भारत में नेटवर्क पटरी है, डेटा टिकट और उपभोक्ता यात्री. फर्क यह है कि इस यात्रा में यात्री अपने व्यवहार के निशान भी छोड़ता है. इसलिए मुद्दा जियो के योगदान को नकारना नहीं, उसकी शक्ति की लोकतांत्रिक सीमा तय करना है.

डिजिटल बाजार की दिशा अब नियामकों की चौकसी तय करेगी. सेबी की जिम्मेदारी आईपीओ और निवेशक पारदर्शिता तक है, लेकिन प्रतिस्पर्धा बचाने का दायित्व प्रतिस्पर्धा आयोग और दूरसंचार नियामक का भी है. डेटा पोर्टेबिलिटी, इंटरऑपरेबिलिटी, प्लेटफॉर्म की निष्पक्षता और छोटे खिलाड़ियों के लिए समान अवसर अब तकनीकी शब्द नहीं, डिजिटल लोकतंत्र की बुनियाद हैं. जियो की तकनीकी ताकत भारत को तेज 5-जी, बेहतर ब्रॉडबैंड, क्लाउड और एआई सेवाएँ दे सकती है, तो उसका लाभ देश तक पहुँचना चाहिए. लेकिन यही ताकत प्रतिस्पर्धियों को दबाने लगे, तो नियामकों का हस्तक्षेप जरूरी है. सफलता महत्वपूर्ण है, पर स्वतंत्र बाजार उससे भी बड़ा मूल्य है.

> जियो का आईपीओ बाजार के लिए उत्सव, पर भारत के लिए बड़ा संकेत है. डिजिटल अर्थव्यवस्था के साथ सत्ता के केंद्रीकरण की आशंका बढ़ रही है. मुकेश अंबानी ने जोखिम उठाकर पूंजी लगाई और भारतीय डिजिटल बाजार बदल दिया—यह बड़ी उपलब्धि है. लेकिन लोकतंत्र किसी सफलता को स्थायी अधिकार नहीं देता. सवाल यह नहीं कि जियो 137 अरब डॉलर की होगी या आगे जाएगी; सवाल है कि उसके बाद नागरिक के पास कितने वास्तविक विकल्प रहेंगे. आज डेटा हमारी आदतों का रिकॉर्ड है, कल वही एआई की ताकत और अर्थव्यवस्था की मुद्रा बन सकता है. इसलिए जियो का आईपीओ केवल शेयरों की बिक्री नहीं, स्क्रीन के पीछे जमा डेटा से आकार लेती सत्ता की कहानी है.

चौपाल से डिजिटल संसद तक

डॉ. अंकिता त्रिपाठी

भारत का लोकतंत्र केवल चुनाव, संसद और विधानसभा तक सीमित नहीं है. भारतीय समाज में जनभागीदारी की परंपरा बहुत पुरानी रही है. गाँव की चौपाल, ग्रामसभा और पंचायत ऐसी व्यवस्थाएँ थीं जहाँ लोग अपने सामुदायिक विषयों पर बैठकर चर्चा करते थे, अपनी समस्याएँ रखते थे और सामूहिक सहमति से समाधान खोजते थे. निर्णय लेने वाला व्यक्ति समाज से अलग नहीं होता था, बल्कि उसी समाज का हिस्सा होता था. इसीलिए निर्णयों में स्थानीय परिस्थितियों और नागरिकों की वास्तविक भागीदारी दिखाई देती थी.

समय बदला और देश आधुनिक संवैधानिक लोकतंत्र में आगे बढ़ा. करोड़ों नागरिकों के लिए प्रत्येक विषय पर प्रत्यक्ष निर्णय लेना संभव नहीं था, इसलिए प्रतिनिधि लोकतंत्र की व्यवस्था बनी. नागरिक अपने प्रतिनिधि को चुनता है और उससे अपेक्षा करता है कि वह संसद या विधानसभा में उसकी आवाज बने. यह व्यवस्था आज भी आवश्यक और लोकतंत्र की आधारशिला है. लेकिन इक्कीसवीं सदी में तकनीक ने नागरिक और शासन के बीच की दूरी को बहुत कम कर दिया है. ऐसे में यह प्रश्न स्वाभाविक है कि क्या नागरिक की भूमिका केवल मतदान करने तक सीमित रहनी चाहिए? मैं एक नागरिक के रूप में अपने प्रतिनिधि को चुनता हूँ. लेकिन चुनाव के बाद संसद में कोई महत्वपूर्ण विधेयक आता है, कोई नया कानून बनने जा रहा होता है या कोई ऐसा निर्णय लिया जाता है जिसका सीधा प्रभाव मेरे जीवन पर पड़ सकता है, तब उस निर्णय की प्रक्रिया में मेरी प्रत्यक्ष भागीदारी कहाँ है? मेरा प्रतिनिधि संसद में उपस्थित होता है, बहस करता है और मतदान करता है, लेकिन उसके निर्णय के पीछे उसके निर्वाचन क्षेत्र के नागरिकों की राय कितनी होती है? संसदीय लोकतंत्र में बहुमत का अपना महत्व है. यदि किसी राजनीतिक दल को बहुमत मिला है तो उसे अपने चुनावी कार्यक्रम के अनुसार कानून बनाने का अधिकार है और विपक्ष को उसका विरोध तथा वैकल्पिक दृष्टिकोण रखने का अधिकार है. लेकिन यहाँ एक नागरिक का प्रश्न फिर भी बना रहता है—जिस कानून का प्रभाव सीधे मुझ पर पड़ना है, क्या मेरी राय जानने के लिए आधुनिक तकनीक का उपयोग नहीं किया जा सकता?

सांसद केवल अपनी पार्टी का प्रतिनिधि नहीं होता. वह अपने निर्वाचन क्षेत्र के प्रत्येक नागरिक का प्रतिनिधि होता है—चाहे किसी ने उसे वोट दिया हो या उसके विरोध में मतदान किया हो. इसलिए महत्वपूर्ण विधेयकों पर उसके क्षेत्र के नागरिकों की राय उसके निर्णय का एक महत्वपूर्ण आधार क्यों नहीं बन सकती? यहीं से डिजिटल संसद की अवधारणा सामने आती है. इसका अर्थ वर्तमान संसद को बदलना या सांसदों की भूमिका समाप्त करना नहीं है. इसका अर्थ है संसद और नागरिक के बीच एक आधुनिक डिजिटल संवाद स्थापित करना. कल्पना कीजिए कि संसद में कोई महत्वपूर्ण विधेयक प्रस्तुत होता है. उसकी सरल भाषा में जानकारी एक आधिकारिक डिजिटल मंच पर उपलब्ध कराई जाए. नागरिकों को बताया जाए कि विधेयक का उद्देश्य क्या है, उसके संभावित प्रभाव क्या हैं और उसके पक्ष तथा विपक्ष में प्रमुख तर्क क्या हैं. इसके बाद प्रत्येक संसदीय क्षेत्र के सत्यापित मतदाताओं से उस विषय पर उनकी राय ली जाए. इससे सांसद के सामने अपने क्षेत्र की प्रमाणित जनभावना उपलब्ध होगी. यदि किसी विधेयक पर उसके क्षेत्र के अधिकांश नागरिक समर्थन करते हैं, तो सांसद उस जनमत को अपने समर्थन के आधार के रूप में संसद में रख सकता है.

यदि नागरिक किसी प्रावधान का विरोध करते हैं, तो सांसद उस भावना को संसद में उठाकर संशोधन की मांग कर सकता है. यदि सांसद जनमत से अलग जाकर मतदान करता है, तो वह अपने निर्वाचन क्षेत्र के नागरिकों को अपने निर्णय का कारण भी बता सकता है. इससे सांसद की संवैधानिक स्वतंत्रता समाप्त नहीं होगी. अंतिम निर्णय लेने का अधिकार सांसद के पास रहेगा और उसे संविधान, राष्ट्रहित, विशेषज्ञों की राय तथा संसदीय बहस को ध्यान में रखना होगा. लेकिन उसके सामने जनता की प्रमाणित राय भी होगी. इससे प्रतिनिधि की स्वतंत्रता और नागरिक की जवाबदेही, दोनों के बीच बेहतर संतुलन बनाया जा सकता है.

यहाँ ग्राम पंचायत और चौपाल की परंपरा विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है. उसकी मूल भावना, जनता की भागीदारी को तकनीक के माध्यम से नए रूप में विकसित किया जा सकता है. इसे डिजिटल चौपाल से डिजिटल संसद की यात्रा कहा जा सकता है. प्रत्येक संसदीय क्षेत्र का एक आधिकारिक डिजिटल जनमंच हो, जहाँ नागरिक विधेयकों पर अपनी राय दे सकें, अपने क्षेत्र की समस्याएँ उठा सकें और यह देख सकें कि उनके प्रतिनिधि ने उन विषयों पर संसद में क्या भूमिका निभाई. इससे सांसद और मतदाता का संबंध केवल चुनाव तक सीमित नहीं रहेगा.

निश्चित रूप से ऐसी व्यवस्था के सामने साइबर सुरक्षा, मतदाता की पहचान, गोपनीयता, गलत सूचना और डिजिटल असमानता जैसी चुनौतियाँ होंगी. इसलिए किसी भी डिजिटल जनभागीदारी प्रणाली को स्वतंत्र, सुरक्षित और पारदर्शी संस्थागत व्यवस्था के अंतर्गत विकसित करना होगा. ग्रामीण, बुजुर्ग और तकनीकी रूप से कम सक्षम नागरिकों के लिए वैकल्पिक माध्यम भी उपलब्ध कराने होंगे. लेकिन कठिनाइयाँ इस विचार को समाप्त करने का कारण नहीं हो सकतीं. तकनीक का उद्देश्य नागरिक को लोकतंत्र से दूर करना नहीं, बल्कि लोकतंत्र के और करीब लाना होना चाहिए. आज नागरिक पाँच वर्ष में एक बार अपने प्रतिनिधि को चुनता है. लोकतंत्र का अगला चरण शायद यह हो कि वह पूरे कार्यकाल में भी अपनी राय व्यक्त कर सके. इसका अर्थ यह नहीं कि हर निर्णय पर जनमत-संग्रह हो, बल्कि महत्वपूर्ण राष्ट्रीय और व्यापक प्रभाव वाले विधेयकों पर नागरिकों से व्यवस्थित डिजिटल परामर्श लिया जाए. तब लोकतंत्र केवल मैंने आपको चुना है तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि नागरिक पूरे कार्यकाल में यह भी कह सकेगा—मैंने आपको चुना है, इसलिए मेरी आवाज भी आपके निर्णयों में सुनी जानी चाहिए.

मैं भारत का नागरिक हूँ-भाग 2

भारत में लोकतंत्र की जड़ें संवाद और सहभागिता में रही हैं. कभी यह संवाद चौपाल पर होता था, आज वही संवाद डिजिटल माध्यम से करोड़ों नागरिकों तक पहुँच सकता है. इसलिए अब आवश्यकता संसद को बदलने की नहीं, बल्कि संसद और नागरिक के बीच दूरी कम करने की है. चौपाल से डिजिटल संसद तक—शायद भारतीय लोकतंत्र की अगली यात्रा यही हो. क्योंकि लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति केवल इस बात में नहीं है कि जनता अपने प्रतिनिधि चुनती है, बल्कि इसमें भी है कि चुने हुए प्रतिनिधि पूरे कार्यकाल में जनता की आवाज सुनते रहें. मतदाता को केवल वोट देने वाला नागरिक नहीं, बल्कि लोकतंत्र की निरंतर प्रक्रिया में सहभागी नागरिक बनाना ही डिजिटल लोकतंत्र का अगला लक्ष्य होना चाहिए.

व्यंग्य

राजनीति कथा अनंता

रवि उपाध्याय
(लेखक व्यंगकार और राजनीतिक समीक्षक हैं)

जब हमारा देश अंग्रेजी सरकार से मुक्त हुआ तब वह कृषि प्रधान कहा जाता था. यह अलग बात है कि उस समय देश के कई हिस्सों में अकाल पड़ता था. हजारों लोग असमय ही काल के गाल में समा जाते थे. देश के आज़ाद होने के करीब 18 सालों के बाद में 1965 तक यही स्थिति रही. इस का मुकाबला करने के लिए तत्कालीन सरकारों ने अमेरिका से वह लाल गेहूं खरीदा जो वहां जानवरों को खाने में दिया जाता था. इसके बाद जब लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने. देश में कृषि क्रांति हुई. अन्न भंडार भर गए तब जा कर लाल गेहूं का आयात बंद हुआ. यह खोज का विषय हो सकता है कि लाल गेहूं का आयात बंद करने में उनके नाम का असर था या काम का.आजादी के बाद देश कृषि प्रधान देश से बदल कर राजनीति प्रधान देश बन चुका है. सियासी दल और नेता कहते हैं कि राजनीति का कोई धर्म नहीं होता है. जैसे आतंकवादी का कोई मजहब नहीं होता है. धर्म को राजनीति में नहीं आना चाहिए. सही भी है कि राजनीति में धर्म का कोई स्थान नहीं होता है. वह अधर्मी होती है. इसका असर हम संसदीय संस्थाओं में देखते हैं.

राजनीति का एक ही धर्म होता है वह सत्ता होती है. यह कहावत है कि प्यार और युद्ध में सब जायज़ है. यही उक्ति आज की राजनीति में भी दिखाई देती है. जिस तरह कहा जाता है कि हरि अनंत हरि कथा अनंता यही बात राजनीति के लिए भी कही जा सकती है. यहां साम,दाम,चाम ,दंड, भेद सब जायज़ है.देश में लोकसभा और विधानसभाओं के बाद प्रजातंत्र ठसक के साथ ग्राम पंचायत में पहुंचा तब जा कर ग्रामीणों को पता चला कि लोकतंत्र कितना फायदे वाला है. नेताओं की शान शौकत देख कर ग्रामीणों को भी लगा कि भैया अब खेती लाभ का धंधा नहीं बचा है . नेतागिरी और राजनीति उससे ज्यादा लाभ का धंधा है.

जब कृषि लाभ का व्यवसाय नहीं रहा तब खेतों में फसल की जगह पर ऊंची ऊंची बिल्डिंग्स ऊगने लगीं. जो जमीन कभी सोना उगलती थी वह नोट छापने लगीं. किसानों के मन में यह बात समा गयी कि नेता तो बोलेरो और स्कॉर्पियो में घूम रहे हैं और हम मिट्टी ही खोद रहे हैं. तब गांवों में राजनीति पहुंची तो गाँव और टोले गुटों और खेमों में बंट गए. मीडिया और अखबारों में गांव के चर्चे होने लगे. कानून बनाने वालों ने ग्राम स्वराज में महिलाओं को भी आरक्षण दे दिया. वे भी राजनीति करने लगीं. इसका बड़ा फायदा हुआ. वकीलों का रोज़गार बढ़ गया. पुलिस की आमदनी बढ़ गई. शहरी नेता भी उदार हो गए एक ने इस गुट की पीठ पर हाथ रख दिया दूसरे दूसरे की पीठ पर हाथ रख दिया.देश नेता प्रधान बन गया. इसी के साथ गांव भी नेता प्रधान बन गए. इसी के चलते एक नई प्रजाति का जन्म हुआ जिसे सरपंच या प्रधान पति का पद प्राप्त हुआ. यह सुविधा आगे चल कर महिला विधायक और सांसद के पतियों को भी मिली. जिस तरह उमा के साथ शंकर होते हैं, सीता के साथ राम वैसे ही निर्वाचित महिला प्रतिनिधि भी अभिन्न हो गए. भला दोनों को अलग कैसे किया जा सकता है. आखिर सात जन्मों तक साथ रहने की कसमें जो ली हैं. कमाल यह रहा कि पहले शोषण के नाम पर विशेष जातियों को आरक्षण को दिया. फिर बताया कि पिछड़ी जातियां इस मलाई से क्यों वंचित रहें. इसके बाद महिलाओं को लाभांवित किया जाने लगा.

इसके बाद नेताओं ने इसमें भी जब मज़ा नहीं आया तब सोचा उमर के हिसाब से युवाओं को हथियार बनाओ. अब जेन ज़ी, जेन अल्?ा, जेन बीटा की बात होने लगी. उन्हें निशाना बनाया जाने लगा . युवतियों को उकसाया जाने लगा कि वे सब बंधन तोड़ दें. न पिता के बंधन में रहें और न ही भाई,बहन, मां और समाज किसी की भी परवाह न करें . पूर्णत: आजाद हो जाएं. देखना यह है कि आजादी की यह सनक कहां तक जाती है.

भारत सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा डिजिटल कार्यक्रमों के अंतर्गत ई शिक्षा तथा ई पुस्तकों के पुस्तकालयों के माध्यम से उपलब्ध कराई जा रही पठन सामग्रियां बच्चों की जिज्ञासा को शांत करने का काम कर रही है . डिजिटल किताबों तथा पुस्तकालयों से यह लाभ है कि देश विदेश में किसी भी भाग में रहकर लोग अपनी इच्छा के अनुसार पुस्तकों पत्रिकाओं आदि को पढ़ सकते हैं . इंटरनेट अब अध्ययन का सुलभ साधन बन गया है .

मनुष्य का ज्ञान से साक्षात्कार करातीं किताबें

संजीव ठाकुर

मनुष्य के जीवन में अध्ययन जितना आवश्यक है उतना ही आवश्यक मनन और चिंतन भी है. केवल पुस्तक पढ़ना ही संपूर्ण मानवीय उद्देश्य ना होकर उससे प्राप्त ज्ञानामृत का मनन एवं चिंतन भी अत्यंत आवश्यक है. किसी भी पुस्तक का अध्ययन मनन एवं उस पर चिंतन मनुष्य के संस्कारों को परिष्कृत करता है एवं जीवन के उच्च आदर्शों को प्राप्त करने में सदैव सहायक सिद्ध होता है. अत: मनुष्य को सदैव निरंतर ज्ञानवर्धक पुस्तकों से न सिर्फ ज्ञान प्राप्त करना चाहिए अपितु उसका निरंतर मनन तथा चिंतन भी करना होगा तब जाकर हमारे संस्कार,संस्कृति एवं जीवन के उद्देश्य सफल होंगे. महात्मा गांधी ने कहा है कि पुराने वस्त्र पहनों पर नई पुस्तकें खरीदोद्य उन्होंने यह भी कहा कि पुस्तकों का महत्व रत्नों से कहीं अधिक है, क्योंकि पुस्तकें अं(ज्ञान चिंतन)

किताबें ही मनुष्य को मनुष्य बनना सिखाती.त:करण को उज्जवल करती हैं. सच्चाई भी यही है कि पुस्तकें ज्ञान के अंत:करण और सच्चाईयों का भंडार होती है. आत्मभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम भी होती हैं. जिन्होंने पुस्तके नहीं पढी हैं या जिन्हें पुस्तक पढ़ने में रूचि नहीं है वे जीवन की कई सच्चाईयों से अनभिज्ञ रह जाते हैं. पुस्तकें पढ़ने का सबसे बड़ा फायदा यह होता है कि हम जीवन की कठिन परिस्थितियों से जूझने की शक्ति से परिचित हो जाते हैं,और समस्या कितनी भी बड़ी हो हम उससे जीतकर निजात पा जाते हैं. कठिन से कठिन समय पर पुस्तकें हमारा मार्गदर्शन एवं दिग्दर्शन करती है. जिन मनीषियों ने पुस्तक लिखी है और जिन्हें पुस्तकें पढ़ने का शौक है उन्हें ज्ञानार्जन के लिए इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं होतीहैं. पूर्व राष्ट्रपति डॉ एपीजे कलाम साहब ने कहा है कि एक पुस्तक कई मित्रों के बराबर होती है और पुस्तकें सर्वश्रेष्ठ मित्र होती हैं. शिक्षाविद चार्ल्स विलियम इलियट ने कहा कि पुस्तके मित्रों में सबसे शांत व स्थिर हैं, वे सलाहकारों में सबसे सुलभ और बुद्धिमान होती हैं और शिक्षकों में सबसे धैर्यवान तथा श्रेष्ठ होती हैं. निसंदेह पुस्तकें ज्ञानार्जन करने मार्गदर्शन एवं परामर्श देने में में विशेष भूमिका निभाती है. पुस्तकें मनुष्य के मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक,नैतिक, चारित्रिक, व्यवसायिक एवं राजनीतिक विकास में अत्यंत सहायक एवं सफल दोस्त का फर्ज अदा करती हैं. प्राचीन काल से ही बच्चों तथा नौनिहालों के विकास के लिए पुस्तकें लिखे जाने का चलन तथा रिवाज रहा है. 'पंचतंत्र 'तथा 'हितोपदेश' इसके बहुत बड़े उदाहरण हैं. पंचतंत्र,हितोपदेश में ज्ञानार्जन के लिए एवं संस्कृति सभ्यता और शिक्षा के उपयोग की बातें जो दैनिक जीवन में अत्यंत प्रभावशाली तथा उपयोगी होती है, लिखी गई हैं. और यही पुस्तकें इस देश की सभ्यता संस्कृति के संरक्षण तथा प्रचार प्रसार में अहम भूमिका निभाती आई है. इसी तरह की पुस्तकों ने ज्ञान का विस्तार भी किया है.

विश्व की हर सभ्यता मे लेखन सामग्री का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है. पुस्तकों के माध्यम से ही धर्म जाति संस्कृति एवं शिक्षा की मार्गदर्शिका से ही समाज आगे बढ़ा है. अच्छी किताबें अच्छे मार्गदर्शक तथा शिक्षित तथा अशिक्षित समाज को चेतना तथा सद्गुणों से संचारित करती है, व्यक्ति के अंदर मानसिक क्षमता का विकास भी होता है. ऐतिहासिक किताबें हमें इतिहास, धर्म, राजनीति, संस्कृति के अनेक पहलुओं से अवगत भी कराती है,जिससे व्यक्तित्व विकास में अत्यंत सहायता मिलती है. पुस्तकों के महत्व को देखते हुए डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा कि पुस्तके वह साधन है जिसके माध्यम से हम विभिन्न संस्कृति एवं समाज के बीच सेतु का निर्माण कर सकते हैं. पुस्तके वह मित्र होती हैं जो हर परिस्थिति तत्काल में सहायक होती है, और यही कारण है कि अनेक लोग गुरुवाणी, हनुमान चालीसा अभी अपने पास रखते हैं.

वर्तमान युग डिजिटल युग कहलाता है अब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में प्रिंट मीडिया के स्थान पर अपने पैर जमा लिए हैं. इस डिजिटल युग में इंटरनेट का महत्व काफी बढ़ गया है. पहले हम बचपन में चंदा मामा, नंदन, बालभारती और अन्य किताबों से ज्ञान से लेकर मनोरंजन तक प्राप्त करते थे. आज इंटरनेट के बढ़ते बाजार की दिशा में युवक पुस्तकों को विभिन्न साइटों मैं खंगाल कर पढ़ लेते हैं.

अब डिजिटल किताबें भी आ गई है साथ ही डिजिटल लाइब्रेरी भी धीरे-धीरे विकसित हो रही है. पर कई कंपनियां विविध किताबों को साइट पर प्रकाशित कर बच्चों के पढ़ने के लिए उपलब्ध करा रही हैं. इससे बड़ी संख्या में बच्चे पढ़ कर लाभान्वित हो रहे हैं. इस दिशा में भारत सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा डिजिटल कार्यक्रमों के अंतर्गत ई शिक्षा तथा ई पुस्तकों के पुस्तकालयों के माध्यम से उपलब्ध कराई जा रही पठन सामग्रियां बच्चों की जिज्ञासा को शांत करने का काम कर रही है. डिजिटल किताबों तथा पुस्तकालयों से यह लाभ है कि देश विदेश में किसी भी भाग में रहकर लोग अपनी इच्छा के अनुसार पुस्तकों पत्रिकाओं आदि को पढ़ सकते हैं. इंटरनेट अब अध्ययन का सुलभ साधन बन गया है. पर दूसरी तरफ इससे कुछ नुकसान भी हो रहे हैं, उचित मार्गदर्शन वाली किताबें न पढ़कर भ्रामक पुस्तकों का अध्ययन कर अपने को दिग्भ्रमित कर रहे हैं और इससे बच्चों का भविष्य भी प्रभावित हो रहा है. इसके लिए छोटे बच्चों को अपनी निगरानी में इंटरनेट से किताबें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करना अन्यथा दिगभ्रमित साहित्य बच्चों की मानसिकता पर विकृत प्रभाव डाल सकता है. इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि पुस्तकें ज्ञान देने के साथ मार्गदर्शन तथा चरित्र निर्माण का सर्वोत्तम साधन है. पुस्तकों से राष्ट्र की युवा कर्ण धारों को नई दिशा दी जा सकती है तथा एकता और अखंडता का संदेश देकर एक महान और सशक्त राष्ट्र की पृष्ठभूमि रखी जा सकती है.